International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
November-December - 2017, Volume-4, Issue-6 P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

साहित्ये दर्शनम कालिदास शंकुतलम

डॉ गोविंद राम चरोरा,

संस्कृत विभाग, महारानी श्री जया महाविद्यालय

भरतपुर, राज.

सार

महाभारत की शकुन्तला भी कालिदास की भांति सलज्ज नहीं है। वह दुष्यन्त को विश्वामित्र और मेनका के सम्बन्ध के फलस्वरुप हुए अपने जन्म की कथा अपने मुंह से ही सुनाती है। महाभारत में दुष्यन्त शकुन्तला के रूप पर मुग्ध होकर शकुन्तला से गांधर्व विवाह की प्रार्थना करता है; जिस पर शकुन्तला कहती है कि मैं विवाह इस शर्त पर कर सकती हूं राजसिंहासन मेरे पुत्र को ही मिले। दुष्यन्त उस समय तो स्वीकार कर लेता है और बाद में अपनी राजधानी में लौटकर जान- बूझकर लज्जावश शकुन्तला को ग्रहण नहीं करता । कालिदास ने इस प्रकार अपरिष्कृत रूप में प्राप्त हुई कथा को अपनी कल्पना से अद्‌भुत रूप में निखार दिया है। दुर्वासा के शाप की कल्पना करके उन्होंने दुष्यन्त के चरित्र को ऊंचा उठाया है। कालिदास की शकुन्तला भी आभिजात्य, सौंदर्य और करुणा की मूर्ति है। इसके अतिरिक्त कालिदास ने सारी कथा का निर्वाह, भावों का चित्रण इत्यादि जिस ढंग से किया है. वह मौलिक और अपूर्व है।

मुख्यशब्द: *महाभारत की शकुन्तला, आभिजात्य, शकुंतला की कथा*

परिचय

कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तल की कथावस्तु मौलिक नहीं चुनी। यह कथा महाभारत के आदिपर्व से ली गई है। यों पद्मपुराण में भी शकुंतला की कथा मिलती है और वह महाभारत की अपेक्षा शकुन्तला की कथा के अधिक निकट है। इस कारण विन्टरनिट्ज ने यह माना है कि शकुन्तला की कथा पद्मपुराण से ली गई है। परन्तु विद्वानों का कथन है कि पद्मपुराण का यह भाग शकुन्तला की रचना के बाद लिखा और बाद में प्रक्षिप्त प्रतीत होता है। महाभारत की कथा में दुर्वासा के शाप का उल्लेख नहीं है। महाभारत का दुष्यन्त से यदि ठीक उलटा नहीं, तो भी बहुत अधिक भिन्न है।

महाभारत की शकुन्तला भी कालिदास की भांति सलज्ज नहीं है। वह दुष्यन्त को विश्वामित्र और मेनका के सम्बन्ध के फलस्वरुप हुए अपने जन्म की कथा अपने मुंह से ही सुनाती है। महाभारत में दुष्यन्त शकुन्तला के रूप पर मुग्ध होकर शकुन्तला से गांधर्व विवाह की प्रार्थना करता है; जिस पर शकुन्तला कहती है कि मैं विवाह इस शर्त पर कर सकती हूं राजसिंहासन मेरे पुत्र को ही मिले। दुष्यन्त उस समय तो स्वीकार कर लेता है और बाद में अपनी राजधानी में लौटकर जान- बूझकर लज्जावश शकुन्तला को ग्रहण नहीं करता । कालिदास ने इस प्रकार अपरिष्कृत रूप में प्राप्त हुई कथा को अपनी कल्पना से अद्‌भुत रूप में निखार दिया है। दुर्वासा के शाप की कल्पना करके उन्होंने दुष्यन्त के चरित्र को ऊंचा उठाया है। कालिदास की शकुन्तला भी आभिजात्य, सौंदर्य और

करुणा की मूर्ति है। इसके अतिरिक्त कालिदास ने सारी कथा का निर्वाह, भावों का चित्रण इत्यादि जिस ढंग से किया है. वह मौलिक और अपूर्व है।

अभिज्ञान शाकुंतल नाटक ने कवि कालिदास को महाकवि कालिदास बनाया और कवि कुलगुरु के स्थान पर बिराजमान किया । यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है । कहा गया है कि – "जर्मन कवि म्युइथ गेटे) ने इस नाटक को पढ़ा और उसका अपने सिर पर लेकर नाचा था । साहित्य के क्षेत्र में उच्च शिरोधार्य स्थान प्राप्त यह उत्तम नाट्य कृति है । मानव मन की ऊर्मिओं मनोभावों) से छलकता नाटक मानवी के हृदय का नाटक है । पितृप्रेम, पशु-पक्षी प्रेम, प्रियतम प्रेम और विरह की व्यथा का आलेखन, इस नाटक की रचना, घटना, प्राकृतिक सौन्दर्य का वरण, कई चिरस्मरणीय क्षण का जीवंत आलेखन, उसी क्षण में धडकते मानव हृदय की मुग्धता, विरल मिलन, वेदना आदि मानव भावों की सूक्ष्मता, कवि की कल्पना, यह काव्य साहित्य जगत का अद्‌भुत उपहार बन रहा है ।

"काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला ।

तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्ट्यम् ॥"

'शाकुन्तल' नाटक

'शाकुन्तल' नाटक ने विश्व साहित्य की कई श्रेष्ठ साहित्य कृतियों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया है । यह कारण है कि कवि की भावनाओं, भावजगत पूर्णत: शब्दों के माध्यम से विकसित हुआ है । कवि ने वनस्पति, पशु, मानव तथा प्रकृति के भावों का जो कलात्मक ढंग से आलेखन किया है, निरूपण, संसार दर्शन और कवि के शब्द वैभव तथा कल्पना वैभव मानव हृदय को प्रफुल्लित करके प्रसन्नता का सजीव वातावरण हृदय में उत्पन्न करता है ।

वह सौन्दर्य कवि कुलगुरु कालिदास का विश्वविख्यात रूपक अभिज्ञानशाकुन्तलम्' इतिवृत्त का मूल स्त्रोत महाभारत के आदिपर्व के 'शकुन्तलोपाख्यान' में शामिल है । महाभारत का दुष्यंत विषैला तथा विलाषी प्रकृति का व्यक्ति है । जो भली-भोली ऋषि कन्या शकुन्तला को अपनी वासना की तृप्ति के लिए अपनी जाल में फँसाकर ऋषि के आगमन के पूर्व, वहाँ से तपोधणी कण्व के शोप के डर से भाग जाता है। ऋषि तो नजदीक ही पुरुषार्थ हेतु गये थे । दुष्यंत राजधानी हस्तिनापूर आकर शकुन्तला को विस्मृत कर देता है । इसके बाद शुकन्तला अपने छ: वर्ष के पुत्र सर्पदमन के साथ दुष्यंत की सभा में उपस्थित होती है । परंतु दुष्यंत शकुन्तला को अस्वीकार करता है । ताकि अपमान सहन न करने के कारण महाभारत की शकुन्तला अपशब्दों का सहारा भी लेती है ।

दुष्यंत को तिरस्कृत भी करती है । अंत में आकाशवाणी के आदेश के कारण दुष्यंत को शकुन्तला और पुत्र सर्वदमन को स्वीकार करने के लिए मजबूर होना पड़ा । दुष्यंत के मन में शकुन्तला के लिए कोई न्याय की भावना नहीं है । दुष्यंत शकुंतला को न पहेचान ने का ढोंग भी करता है । इस प्रकार का आचरण महाभारत में चित्रित दुष्यंत का वर्तन अधम है। दुष्यंत के निदंनीय चरित्र के कारण न तो वह हमारी सहानुभूति का पात्र बनता है न तो प्रशंसा का अधिकारी !

कवि मूर्धन्य कालिदास ने सृष्टि में आनंदित परम तत्त्व का शाश्वत, सत्य, शिव और सुंदरता के रूप में साक्षात्कार किया है । जीवन की समग्र भूमिका को रखकर उसके ब्रह्मांड के दर्शन करनेवाले यह कवि धार्मिक रहस्यों के

दृष्टा है । जीवन में दिखाई देनेवाले विरोधी धर्म और विरोधाभास की महिमा करके उसके समन्वय में जैसे कि निष्पन्न होते परिणाम में ही उन्होंने पूर्णता के दर्शन किये हैं । महाकवि कालिदास के बारे में उमाशंकर जोषी ने कहा है कि – "कालिदास में काव्य रचना की पर्णता दृष्टिगोचर होती है । फिर भी इनमें जो कोई विशेष गुण प्राप्त हो, तो वह है – जीवन के ब्रह्मांड का दर्शन करने की उच्च शक्ति । "

कवि की यह शक्ति दृष्टि वह एक ऋषि के आध्यात्मिक दर्शन है । जिसको ईश्वरीय चेतना का संस्पर्श हुआ है । महाकवि कालिदास के बारे में सर्वेक्षण 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' नाटक में सर्वार्थ सिद्ध को प्राप्त हुआ है इस नाटक में राग और त्याग का गौरव हुआ है । अंत में इस दोनों ध्रुवों के समन्वय को ही परम तत्त्व कहा गया है । वही परम आनंद स्वरूप में है ।

हेन्री वेल्स लिखते हैं कि – " शाकुन्तल का कार्य रोमेन्टिक नाटक नहीं, परंतु एक धर्ममूलक पवित्र नाटक है । "

उद्देश्य

1. महाभारत की शकुन्तला भी कालिदास की भांति सलज्ज नहीं है।

2. 'शाकुन्तल' नाटक ने विश्व साहित्य की कई श्रेष्ठ साहित्य कृतियों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया है ।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

अभिज्ञानशाकुन्तलम् साहित्यक दृष्टि से एक अद्वितीय कलाकृति है, किन्तु उसका सूक्ष्म अध्ययन करने से वह एक कान्तदृष्टा ऋषि के अनुपम दर्शन होने के कारण आंतरिक प्रतीति जगाती है । इसमें मानुषी भावों को दिव्यता में रूपांतरित किया गया है ।

कालिदास के तीनों नाटकों में नांदी श्लोक में शिव की ही स्तुति की गई है । कालिदास शिव का महान देव मानते हैं । शिव, सत्य, शिवम् और सुन्दरम् अधिष्ठता देव है । शिव ही सृष्टि के पूरे ब्रह्मांड में अंदर बहार सर्वत्र विद्यमान है । तमस से पर परम ज्योति स्वरूप शिव ने आठ ऋषिओं के द्वारा प्रत्यक्ष अनुभूति कर सके ऐसे परमेश्वर के स्थान पर शकुन्तला को नन्दी में अभिव्यक्त है ।

जल, अग्नि, सूर्य, चंद्र, आकाश, पृथ्वी, होतक यजमान) और वायु– ये आठ विभूतियों से ईश्वर शिव) प्रत्यक्ष हुए है । ये आठ तत्त्वों के संघात में से सृष्टि का आविर्भाव अवतार) हुआ है । प्रलय के समय ये तत्त्व इश्वर में ही समाहित होते हैं । शाकुन्तल की भूमिका के समापन में कालिदास ने व्यंजनापूर्ण कथा प्रवेश किया है ।

" तवास्मि, गीतरागेण हरिण प्रसभं हतः ।

एष राजेव दुषयन्तः सारङ्गोणतिरंहसा ॥ "

अर्थात् – जैसे अति द्रुत गति हिरन के वेग से यह राजा दुष्यंत आकर्षित हो गया, उसी तरह तुम्हारे मनोहर गीत के राग से मैं अति आकर्षित हो गया । यहाँ पर हिरन कामना या राग का प्रतीक है । तपोवन में पली भोली, सुंदर तथा योवन के कारण मन हरनेवाली ऐसी शकुन्तला का भी व्यंजक बना है । यहाँ प्रयुक्त – 'प्रसभं हतः सारङ्गेपातिरंहसा' शब्द अत्यंत महत्त्व के हैं । प्रबल कामना इस वेग से दुष्यंत शंकुतला की ओर आकर्षित होता है । विषयी मन को वह संयम नहीं कर सकता । आरंभ में असंयमी, विषयी, रागी और मिथ्यावादी लगते युवा राजवी की अंत: चेतना में संचित संस्कारों को धीरे धीरे जाग्रत करके कवि उसको आध्यात्मिकता के प्रति ले गया है । नाटक के प्रारंभ में दुष्यंत और शकुन्तला को मानव सहज वृत्तियाँ प्रबल और वेगवंत हो, ऐसे वातावरण में रखे हैं और क्रमशः राग से वैराग्य की ओर खींचे जाते हैं । कवि कालिदास का उद्देश्य मानव चेतना का भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर निर्देश करना है ।

दुष्यंत के रथ के मार्ग में आये तपस्वी विवेक का प्रतिनिधित्व करते हैं । तपस्विओं को देखते ही दुष्यंत की चेतना में विद्यमान विवेक जाग उठता है और वह संयमित होकर रथ को रोक देता है । किन्तु विषयावृत्ति चित्त के दुष्यंत के मन में विवेक स्थिर नहीं होता । 'तुं' चक्रवर्ती पुत्रने पामजे' ऐसा ऋषिओं को दिया वरदान उसके संचित संस्कारों का परिणाम है। दुष्यंत विशुद्ध कर्मनिष्ठ राजर्षि है । उसके व्यक्तित्व में जो विचार ज्ञात होते हैं वे अतिथि है । वे भी कर्मनिष्ठ के रूप में ही आये तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में से जन्म लिया है । स्वाभाविक नहीं है ।

आश्रम में प्रवेश करता हुआ दुष्यंत विनय भंग नहीं करता । वह सूत को कहता है कि – 'विनीतवेषण प्रवेष्टव्यानि तपोवनानि नाम' । तपोवन में तो नम्रता से प्रवेश करना योग्य है । यहाँ हमे ज्ञात हो सकते हैं कि दुष्यंत में राजाचित्त संयम और विवेक है ।

कुन्तला प्रखर तपस्वी विश्वामित्र और सौन्दर्य में मूर्धन्य मेनका की संतान है । तप और सुंदरता का स्वाभाविक समन्वय इनमें है । संयमित सौंदर्य की वह प्रतिमूर्ति है। दुष्यंत के रागवृत्ति को उत्तेजित कर सके ऐसा रागपूर्ण उसका सौंदर्य है । उसके प्रथम दर्शन में ही दुष्यंत अनुभव करता है ।

शुद्धान्तदुर्लभमिदं वपुराश्रमवासिनो यदी जनस्य ।

दूरीकृताः खलु गुणैरूद्यानलता वनलताभिः ॥

आश्रम में रहते हुए लोगों का सौन्दर्य अंतःपुर में भी न मिल सके ऐसा हो, तो सही गुणों में वनलतायें उद्यान की लताओं को भा गई ।) दुष्यंत देखता है कि, यौवन से अभिनव लगते शकुन्तला के शरीर को वत्कल भी कैसा शृंगार रूप निखरा है ।

नगरजीवन के भौतिक सुखों से अभ्यस्त होने के कारण दुष्यंत में भोगाकांक्षा कामवासना) सहज है । दिपरहीत तपोवन में संयमित जीवन से अभ्यस्त शकुंतला युवती सहज भावों को अनुभूति करती है । फिर भी विवेक को संभाल सकती है । वह संसारी भाव जगत से अज्ञात होते हुए भी मानव सहज भावों से अस्पृष्ट न रह सकी । दुश्यंत को देखते ही वह अनुभव करती है कि – " आने जोडने हुं तपोवन विरोधी विकार वाणी के बनी ?"

शकुंतला संयम जिसका धन है ऐसे तपोधन के सान्निध्य में और तपोवन के संयमित पवित्र वातावरण में पालन-पोषण हुआ था, ताकि इन्द्रियों की प्रकृति को सूक्ष्मता से देखा है । शकुंतला के स्वभाव की सीमा है - नरी वैयक्तिता । दुष्यंत को मिलने के बाद दुष्यंत ही इसका इष्ट है। जिस कण्वे ने उसका पालन पोषण किया, जिसने उसके प्रतिकूल दैव के शमन के लिए सोमतीर्थ तक पहूँचे, उस पिता की शादी के लिए अनुमति की परवाह न की । स्वसुख को केन्द्र में रखकर उन्होंने गांधर्वविवाह को माना । शायद जीवन में पहली बार अपनी इच्छानुसार यह महत्त्व का निर्णय शकुंतला ने लिया था और वह भी तुरन्त जिसका परिचय तनिक समय में हुआ ऐसे अतिथि दुष्यंत के भरोसे । शकुंतला के इस निर्णय में दूरदर्शिता और धीरज का अभाव है ।

दुष्यंत बहुपत्नीत्व व्यक्तित्व के धनी थे । कालिदास के समय में राजाओं के यह स्वाभाविक विशेषता मानी जाती थी, किन्तु दुष्यंत और शकुंतला का प्रणय सम्बन्ध ऐसा स्थूल या भौतिक नहीं । शकुंतला अपने सौम्य हृदय से दुष्यंत की जन्मजन्मांतर का सहचर्या रही थी । शकुंतला कुल की प्रतिष्ठा है । वह अपनी सखियों को कहती है कि

"परिग्रहबहुत्वे पि दे प्रतिष्ठे कुलस्य में ।

समुद्ररशना चोर्वी सखी च युवयोरियम् ॥"

भले ही मेरी अनेक पत्नियाँ हो, फिर भी सिर्फ दो ही मालाएँ कुल के प्रतिष्ठा के रूप में होगी । समुद्र के समान मेखले की पृथ्वी और आपकी यह सखी ।)

दुष्यंत - शकुंतला का प्रेम गांधर्व विवाह में परिवर्तित हुआ । राग बंधन हुआ, किन्तु गठबंधन प्रेम की मूलभूत परिभाषा में प्राप्त नहीं है । कालिदास का मन प्रेम दिव्य तत्त्व है । प्रेम मुक्ति के मार्ग को प्रज्वलित करता है । राग, आसक्ति, वैयक्तिकता आदि दूर न हो, वर्ष तक प्रेम में पूर्ति न हो । कालिदास का लक्ष्य है प्रेम में परमतत्त्व का अवतार ।

'दुर्वासानो शाप' इस नाटक की अनिष्ट घटना है, लेकिन इष्ट-अनिष्ट रूप द्वन्द्वों के समुदाय को ही जगत कहा गया है । केवल इष्ट ही परमात्मा रूप है । इष्ट प्राप्ति की इच्छा धारण करनेवाले का प्रयास यह रहता है कि, वठे अनिष्ट का भी समजे और उसका निराकरण कर सके । शकुंतला दुष्टयंत का अपना सर्वस्व मानकर कर्तव्यों के प्रति अज्ञात बन गयी और दुष्यंत ही उसको भूल गया। दुष्यंत जैसे सत्पात्र के प्रेम का संस्पर्श होने के बाद शकुंतला के प्रेम का परिघ विस्तृत नहीं हुआ । स्वरति में सीमित न हुआ । व्यक्तिगत राग आधार पर प्रेम धर्म विरूद्ध है । वह सत्य के साक्षात्कार के लिए ही 'दुर्वासानो शाप' प्रयोजक हुआ है ।

निष्कर्ष

अभिज्ञान शाकुन्तल में नाटकीयता के साथ-साथ काव्य का अंश भी यथेष्ट मात्रा में है। इसमें श्रृंगार मुख्य रस है; और उसके संयोग तथा वियोग दोनों ही पक्षों का परिपाक सुन्दर रूप में हुआ है। इसके अतिरिक्त हास्य, वीर तथा करुण रस की भी जहां- तहां अच्छी अभिव्यक्ति हुई है। स्थान-स्थान पर सुन्दर और मनोहरिणी उतप्रेक्षाएं न केवल पाठक को चमत्कृत कर देती हैं.. किन्तु अभीष्ट भाव की तीव्रता को बढ़ाने में ही सहायक होती हैं। सारे नाटक में कालिदास ने अपनी उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं का उपयोग कहीं भी केवल अलंकार-प्रदर्शन के लिए नहीं किया। प्रत्येक स्थान पर उनकी उपमा या उत्प्रेक्षा अर्थ की अभिव्यक्ति को रसपूर्ण बनाने में सहायक हुई है।

कालिदास अपनी उपमाओं के लिए संस्कृत-साहित्य में प्रसिद्ध हैं। शाकुन्तल में भी उनकी उपयुक्त उपमा चुनने की शक्ति भली-भांति प्रकट हुई। शकुन्तला के विषय में एक जगह राजा दुष्यन्त कहते हैं कि 'वह ऐसा फूल है, जिसे किसी ने सूंघा नहीं है; ऐसा नवपल्लव है, जिस पर किसी के नखों की खरोंच नहीं लगी: ऐसा रत्न है, जिसमें छेद नहीं किया गया और ऐसा मधु है, जिसका स्वाद किसी ने चखा नहीं है।'

संदर्भ

1. "कालिदास - कालिदास जीवनी - कविता शिकारी"। मूल से 24 सितंबर 2011 को पुरालेखित। 5 अक्टूबर 2011 को लिया गया।

2. कालिदास (2001). शकुंतला की पहचान: सात अधिनियमों में एक नाटक। ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। पीपी। नौवीं। ISBN 9780191606090। मूल से 22 अक्टूबर 2020 को पुरालेखित। 14 जनवरी 2011 को लिया गया।

3. पी एन के बमजई (1 जनवरी 1994)। कश्मीर की संस्कृति और राजनीतिक इतिहास। वॉल्यूम। 1. एम.डी. प्रकाशन प्रा। लिमिटेड पीपी। 261-262। आईएसबीएन 978-81-85880-31-0। मूल से 15 मई 2011 को पुरालेखित। 15 नवंबर 2011 को लिया गया।

4. एम. के. काव (1 जनवरी 2004)। कश्मीर और उसके लोग: कश्मीरी समाज के विकास में अध्ययन। एपीएच प्रकाशन। पी। 388. आईएसबीएन 978-81-7648-537-1। मूल से 20 मई 2013 को पुरालेखित। 15 नवंबर 2014 को लिया गया।

5. वासुदेव विष्णु मिराशी और नारायण रघुनाथ नवलेकर (1969)। कालिदास; तिथि, जीवन और कार्य। लोकप्रिय प्रकाशन। पीपी। 1-35। आईएसबीएन 9788171544684।

6. के कृष्णमूर्ति (1994)। इंजी कालिंदी चरण पाणिग्रही। साहित्य अकादमी। पीपी। 9-10। आईएसबीएन 978-81-7201-688-3।

7. कालिदास का शकुंतला और अन्य कृतियों का अनुवाद। जेएम डेंट एंड संस, लिमिटेड। 1 जनवरी 1920। मूल से 13 अप्रैल 2012 को पुरालेखित। 5 अक्टूबर 2013 को लिया गया

8. "कालिदास"। मूल से 13 अप्रैल 2012 को पुरालेखित। 7 अप्रैल 2012 को लिया गया।

9. शूयलर, मोंटगोमरी जूनियर (1901)। "चाकुंतला के संस्करण और अनुवाद"। अमेरिकन ओरिएंटल सोसाइटी का जर्नल। 22: 237-248

10. शूयलर, मोंटगोमरी जूनियर (1902)। "कालिदास के मालविकाग्निमित्र और विक्रमोर्वशी की ग्रंथ सूची"। अमेरिकन ओरिएंटल सोसाइटी का जर्नल।

11. लियनहार्ड, सिगफ्राइड (1984)। ए हिस्ट्री ऑफ़ क्लासिकल पोएट्री: संस्कृत, पाली, प्राकृत (ए हिस्ट्री ऑफ़ इंडियन लिटरेचर वॉल्यूम III), पी। 116. ओटो हैरासोवित्ज़, विस्बाडेन।

12. कालिदास के मेघदूत पर रवींद्रनाथ टैगोर"। बादल और धूप। 16 सितंबर 2011। 13 अप्रैल 2012 को मूल से संग्रहीत। 7 अप्रैल 2012 को पुनःप्राप्त

13. शकुंतला और अन्य कार्यों का अनुवाद - ऑनलाइन लाइब्रेरी ऑफ़ लिबर्टी"। oll.libertyfund.org। 6 सितंबर 2015 को मूल से संग्रहीत। 5 अक्टूबर 2015 को पुनःप्राप्त

14. मौरिस विंटरनिट्ज़; मोरिज विंटरनिट्ज़ (1 जनवरी 2008)। भारतीय साहित्य का इतिहास। मोतीलाल बनारसीदास. पी। 238. आईएसबीएन 978-81-208-0056-4। मूल से 24 जून 2016 को पुरालेखित। 15 नवंबर 2015 को लिया गया।